Ist Paper

Ist Sem. Ist Paper

M.A
Sem-I
C.C.I

प्राकृत भाषा के भेदों का वर्णन करते हुए उनकी विशेषताओं का उल्लेख करें।

प्राकृत लोक-भाषा के रूप में फलती-फूलती रही, किन्तु आज उन्हें जानने का आधार उनका साहित्यिक रूप ही है। वाचिक भाषा अस्थायी होती है। किसी भी भाषा का रूप लिखित न रहने पर कालान्तर में उसका ज्ञान असम्भव हो जाता है। प्राकृत भाषा के भेदों को लेकर पर्याप्त मतभेद है किन्तु इनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं।

(1) महाराष्ट्रीय प्राकृत → इस प्राकृत का मूलस्थान महाराष्ट्र प्रदेश है। यह पद्य की भाषा है। संस्कृत नाटकों में जो प्राकृत की पद्यात्मक रचना हुई है वह महाराष्ट्री प्राकृत में ही है। इसके अतिरिक्त हाल की 'गाथसत्तसई' (गाथासप्तशती) और प्रवरसेन के 'रावणवहो' (सेतुबन्ध) नामक प्रसिद्ध काव्यों की भाषा महाराष्ट्री प्राकृत ही है। कुछ विद्वान महाराष्ट्री प्राकृत को शौरसेनी का ही विकास मानते हैं इसकी उत्पत्ति दक्षिण भारत में मानी जाती है और यह मराठी का पूर्व रूप है।

विशेषताएँ – महाराष्ट्री प्राकृत की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसमें स्वर-बाहुल्यता की अधिकता होती है सम्भवतः इस स्वर-बाहुल्य के कारण ही उसमें संगीतात्मक आ गयी है। इसमें दो स्वरों के मध्यवर्ती व्यंजन का लोप हो जाता है जैसे नूपुर = णेउर, लोको = लोओ, रिपु = रिउ। इस प्राकृत में कुछ महाप्राण वर्णों का लोप न होकर 'ह' में परिवर्तन हो जाता है जैसे-मेघः = मेहो, नाथः = नाहो, शाखा = साहा। इसमें उष्मवर्णों – श, ष, स का 'ह' हो जाता है जैसे – दश = दह, पाषाण = पाहाण, दिवस = दिअह।

(2) शौरसेनी प्राकृत → इस प्राकृत का प्रयोग गद्य में होता है। संस्कृत नाटकों में मध्यम पात्रों और नारियों के सम्भाषण में शौरसेनी प्राकृत से काम लिया जाता है। यह प्राकृत मूलतः मथुरा या शूरसेन के आस-पास की बोली थी। इसका विकास वहाँ के पालि-कालीन स्थानीय बोली से हुआ था। शौरसेनी अपने समय की सर्वाधिक अभिजात्य भाषा थी। जैनों (दिगम्बर) ने अपने सम्प्रदायिक ग्रन्थों के लेखन में भी इसका प्रयोग किया है।

विशेषताएँ → शौरसेनी प्राकृत में दो स्वरों के बीच संस्कृत के 'त' का 'द' और 'थ' का 'ध' हो जाता है जैसे – भवति = होदि। इस प्राकृत में क्ष का विकास सामान्यतः क्ख में हुआ है जैसे – इक्षु = इक्खु, कुक्षि = कुक्खि। शौरसेनी में ऋ का विकास 'इ' होता है जैसे- गृध = गिद्ध। साथ ही इसमें परस्मैपद का प्रयोग होता है और आत्मनेपद की उपेक्षा।

(3) मागधी प्राकृत → जैसा नाम से स्पष्ट है कि मागधी मगध की भाषा थी। नाटकों में इसका प्रयोग नीच पात्रों के लिए होता है महाराष्ट्री और शौरसेनी के तुलना में मागधी का प्रयोग कम मिलता है।

विशेषताएँ – मागधी प्राकृत में 'र' का 'ल' हो जाता है जैसे – पुरुष = पुलिशे। दरिद्र = दलिद्दा, इस प्राकृत में ष, स का श हो जाता है जैसे सप्त = शत्त। पुरुष = पुलिशे। [illegible]

मागधी प्राकृत में कहीं-कहीं 'ज' का 'य' हो जाता है। जैसे-जनाति = यणादि
जायते = यायदे।

(4) अर्धमागधी प्राकृत – अर्धमागधी का क्षेत्र मागधी और शौरसेनी के बीच है अर्थात यह प्राचीन कोसल के आस-पास की भाषा है। इसमें मागधी की प्रवृत्तियाँ भी पर्याप्त मात्रा में मिलती हैं इसलिए इसका नाम अर्धमागधी है। भगवान महावीर का मूल उपदेश अर्धमागधी भाषा में हुआ था; इसी कारण जैनियों ने इसके लिए आर्ष, आर्षी और आदि भाषा का भी प्रयोग किया है। इसका प्रयोग मुख्यतः जैन साहित्य में हुआ है।

विशेषताएँ – अर्धमागधी में अनेक स्थलों पर दंत्य ध्वनियाँ मूर्धन्य हो गई हैं जैसे – स्थित = ठिय। इस प्राकृत में 'च' वर्ग के स्थान पर कहीं-कहीं 'त' वर्ग मिलता है जैसे – चिकित्सा = तेइच्छा।
अर्धमागधी में 'क' के 'ग' होने की प्रवृत्ति भी है जैसे-एक = एगो। कुछ अन्य प्राकृतों के बीच स्पर्श का लोप मिलता है वहाँ इसमें 'य' श्रुति मिलती है जैसे-सागर = सायर।

(5) पैशाची प्राकृत → यह प्राकृत भारत के उत्तर में बोली जाती थी। गुणाढ्य ने पैशाची में ही अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'बृहत्कथा' लिखी थी। जिसकी काफी प्रशंसा की गई है।

विशेषताएँ – पैशाची प्राकृत में सघोष ध्वनि का अघोष हो जाता है जैसे - गगन = गकन, राजा = राचा। इस प्राकृत में इसके कुछ रूपों में 'ल' के स्थान पर 'र' और कुछ में 'र' के स्थान पर 'ल' हो जाता है। दोनों का वैकल्पिक सा प्रयोग है जैसे – रुद्र = लुद्द। कुमार = कुमाल; फल = फर। इस प्राकृत में 'ष' के स्थान पर कहीं 'स' और कहीं 'ख' मिलता है जैसे – विषमः = विसमो।
अन्य प्राकृतों की तरह स्वरों के बीच में आनेवाले स्पर्श इसमें लुप्त नहीं होते – नगर = नकर।

Scanned with CamScanner